

महिला की स्थिति: उत्तर वैदिक काल में अधिकार और भूमिका

Dr. Mainpal Sawami

Assistant professor, S.K.D university hanumangarh J.N

सार

प्रारंभिक वैदिक सभ्यता में महिलाओं के योगदान को बहुत महत्व दिया जाता था। बाद के कालों की तुलना में, उनकी राजनीतिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ था। यह इस तथ्य से जुड़ा है कि प्रारंभिक वैदिक काल में पर्याप्त सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता थी, जिससे महिलाओं के लिए अपने अधिकारों का दावा करना और विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेना संभव हो पाया। प्रारंभिक वैदिक भारत के राजनीतिक इतिहास में, महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। प्राचीन भारत में महिलाओं को परिवार और समाज में सम्मान दिया जाता था। वेदों के कई अंशों में, उन्हें गृहिणी की भूमिका सौंपी गई थी, जिससे उनके समकालीन ईर्ष्या करते थे। ऋग्वेद में लगभग 300 कवियों और ऋषियों के नाम मिलते हैं। महाभारत और रामायण जैसे प्राचीन महाकाव्यों की कथाएँ उस समय की महिलाओं के जीवन के बारे में जानकारी का सबसे समृद्ध स्रोत हैं। आज भी, इन महाकाव्यों में चित्रित विचार प्रासंगिक हैं।

मुख्य शब्द: महिलाएँ, वैदिक काल, भारत, राजनीतिक स्थिति और रामायण।

परिचय

प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाओं ने समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी राजनीतिक स्थिति बाद के काल की महिलाओं की तुलना में काफी बेहतर थी। इसका कारण यह माना जाता है कि प्रारंभिक वैदिक काल सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता का काल था, जिसने महिलाओं को अपने अधिकारों का दावा करने और विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने का अवसर दिया। प्रारंभिक वैदिक भारत के राजनीतिक इतिहास में महिलाओं ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह उन कई शिलालेखों से स्पष्ट है जिनमें महिलाओं, उनके कार्यों, कथनों और समाज पर उनके प्रभाव का उल्लेख है। एक महिला राजनीतिक हस्ती का उल्लेख करने वाले सबसे पुराने शिलालेखों में से एक हाथीगुम्फा शिलालेख है, जो लगभग 1500 ईसा पूर्व में रचा गया था। इस शिलालेख में एक महिला के कार्यों और कथनों का उल्लेख है। यह शिलालेख इस बात का प्रमाण देता है कि इस प्रारंभिक काल में महिलाएँ राजनीति में सक्रिय थीं और समाज पर उनका प्रभाव था। एक अन्य उदाहरण मानसयान अर्थशास्त्र है, जिसे कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी कहा जाता है। इस ग्रंथ में सरकार चलाने के विस्तृत निर्देश हैं और विभिन्न सामाजिक पहलुओं का वर्णन है। अपनी राजनीतिक उपलब्धियों के बावजूद, प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाओं को समान अधिकार नहीं दिए गए थे। उदाहरण के लिए, उन्हें आमतौर पर सत्ता और निर्णय लेने के पदों से बाहर रखा जाता था। यह श्रुति (प्राचीन हिंदू धर्म में "ग्रंथों" या "अधिकारों" के लिए प्रयुक्त शब्द) के अनेक संदर्भों से स्पष्ट है, जिनमें पुरुष देवताओं को आचार्य (शिक्षक) और महिला देवताओं को विद्याधरी (शिक्षार्थी) कहा गया है।

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति

प्राचीन भारत में महिलाओं को घर और व्यापक समाज, दोनों में सम्मानित स्थान प्राप्त था। वेदों के विभिन्न भागों में उनके समकालीन लोग उनकी प्रशंसा करते थे, लेकिन घर की रानी के रूप में उनकी स्थिति से ईर्ष्या भी करते थे। दुर्भाग्य से, सातवीं शताब्दी की शुरुआत में, दूसरे देशों से लगातार आक्रमणों ने महिलाओं के लिए एक शत्रुतापूर्ण वातावरण बना दिया। आक्रमणकारी सेनाओं द्वारा दुर्व्यवहार की संभावना के कारण, पुरुषों को उनकी रक्षा का दायित्व सौंपा गया। इस कारण, परिवार का पुरुष सदस्य परिवार के प्रभुत्वशाली सदस्य की भूमिका निभाने लगा, और महिला सदस्य पूरी तरह से पुरुष सदस्य पर निर्भर हो गई। वेदों के काल में, विशेष रूप से ऋग्वेद के काल में, महिलाओं को समाज में अत्यंत सम्मानित और शक्तिशाली स्थान प्राप्त था। यह स्पष्ट था कि एक महिला में भारतीय संस्कृति के सभी गुण समाहित थे। सरस्वती, लक्ष्मी द्वारा धन, दुर्गा द्वारा शक्ति, रेती द्वारा सौंदर्य और गगन द्वारा पवित्रता, शिक्षा के पहलू थे। परिणामस्वरूप, नैतिक रूप से महत्वपूर्ण और मूल्यवान इन सभी पहलुओं की तुलना एक महिला से की गई या उनके नाम पर उनका उल्लेख किया गया। वेदों के काल में, महिलाओं के लिए नेतृत्व के पदों पर आसीन होना सामान्य बात थी, और उन्हें पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त होती थी। प्राचीन भारतीय ग्रंथ यजुर्वेद में उन्हें "सोम पुरोहित" कहा गया है। लोपमुद्रा, आराध, सारम, रोमा, विव्र, अप्ल, यमी और घो जैसी महिलाएँ इस समूह की सदस्य थीं। धर्म, साहित्य और अर्थव्यवस्था में उन्हें पुरुषों के समान ही शक्ति प्राप्त थी और वे वैदिक मंत्रों का पाठ कर सकती थीं। फिर भी, यह काल बहुत लंबा नहीं चला। समय के साथ महिलाओं की दैवीय समानता बहिष्कार की स्थिति में बदल गई। वैदिक काल में महिलाओं का धार्मिक गतिविधियों में भाग लेना वर्जित था, जबकि वैदिक काल में वे समाज और धर्म दोनों का एक अभिन्न अंग थीं। वैदिक परंपरा के काल में, दैवीय कल्पना और पवित्र आत्मा द्वारा महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को उन्नत किया गया था; फिर भी, उस समय से यह पूरी तरह बदल गया है। स्त्रियों पर पुरुषों की श्रेष्ठता का विकास वर व्यवस्था के आगमन के साथ ही हुआ। यह वैदिक सभ्यता में व्याप्त शक्ति के असंतुलित वितरण के कारण था। इसके प्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप, एक ऐसा युग आया जिसमें स्त्रियों की गरिमा का हनन हुआ। स्त्रियों को न केवल मानसिक, बल्कि आध्यात्मिक रूप से भी प्रगति करने से रोकने के लिए अनेक बाधाएँ खड़ी की गईं। वैदिक साहित्य में यह दर्शाया गया है कि निम्न जाति के लोगों, जिनमें स्त्रियाँ भी शामिल हैं, को किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी, यौवन से पहले विवाह का प्रचलन व्यापक था, और विधवा से पुनर्विवाह करना अवैध था। इस धर्म में, स्त्री के पति को देवता का दर्जा दिया गया था; बहुविवाह को मान्यता दी गई थी; सती प्रथा को लागू किया गया था; और स्त्रियों के लिए यज्ञ करना, प्रार्थना करना या धार्मिक पुस्तकें पढ़ना वर्जित था। उन्हें राधक का पद प्रदान किया गया था।

वैदिक ऋषियों में महिलाएं भी शामिल हैं

ऋग्वेद में इसके लिखे जाने के समय के लगभग तीन सौ कवियों और ऋषियों के नाम हैं। दूसरी ओर, ऋग्वेद में केवल ग्यारह या बारह महिला समकक्षों के नाम हैं, जो कुल संख्या का मुश्किल से चार प्रतिशत है। यह स्पष्ट रूप से समाज में महिलाओं को यह नहीं दर्शाता कि उनके पास समान अधिकार या समान अवसर हैं। अल्प ऋग्वेद में एक महिला पात्र है, जो अपने पति द्वारा अपनी बीमारी के कारण त्याग दिए जाने के बाद, अपने पिता के पास रहने लगी और इंद्र से अपनी बीमारी को ठीक करने का आशीर्वाद मांगा ताकि वह अपना सौंदर्य वापस पा सके। उसके पति ने उसकी बीमारी के कारण उसे त्याग दिया था। लेकिन ऐसा प्रतीत नहीं होता कि इंद्रादि उसे आशीर्वाद देंगे। एक दिन स्नान करने के बाद, आपल सोम चबा रही थी, जब वह अपने सामने इंद्र को खड़ा देखकर चौंक गई। आपल ने तुरंत अपने मुँह में रखा सोम रस इंद्र के साथ साझा करने की पेशकश की।

कन्या भ्रूण हत्या

वैदिक सभ्यता के काल में, संस्कारों का उत्तरदायित्व पुत्र को दिया जाता था। इसके प्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप, युवा बालकों की लालसा उत्पन्न हुई। इसके परिणामस्वरूप, कन्या की माता को लज्जा का अनुभव होता था, और जिन स्त्रियों की केवल पुत्रियाँ होती थीं, उन्हें काफी कलंक का सामना करना पड़ता था। वेदों द्वारा निर्धारित भारी दहेज ही उन कारणों में से एक था जिसके कारण पुत्री को बोझ समझा जाता था। परिणामस्वरूप, कन्या शिशु की हत्या को इस बोझ से मुक्ति पाने का एक व्यावहारिक विकल्प माना जाने लगा। जब भी उनके यहाँ कन्या का जन्म होता, वे कन्या के बजाय बालक को गोद लेना पसंद करते थे। तैत्तिरीय संहिता इस उपचार पद्धति को स्वीकृति प्रदान करती है। अपनी पुस्तक "नैतिक विचारों की उत्पत्ति और विकास" श्रृंखला के प्रथम खंड में, वेस्टर मार्क ने प्राचीन और आधुनिक, दोनों ही काल में, विभिन्न स्थानों के बर्बर और सभ्य, दोनों ही प्रकार के लोगों के बीच इस प्रथा का व्यापक परीक्षण किया है (1906)।

शादी

विवाह कानून और रीति-रिवाज इस बात पर प्रकाश डाल सकते हैं कि पुरुष महिलाओं को माल या युद्ध की लूट समझते हैं या नहीं, या उन्हें इस बात का एहसास है या नहीं कि पत्नी अपने पति की मूल्यवान साथी होती है और पारिवारिक जीवन में सुख और सफलता के लिए उनका सहयोग आवश्यक है। नई सामाजिक ताकतें समय से पहले विवाह करने की वकालत कर रही थीं। पूरे वैदिक काल में, माता-पिता की मुख्य चिंता अपनी युवा बेटियों की सुरक्षा थी, और वे इसे सुनिश्चित करने के लिए वार्षिक विवाह को सर्वोत्तम उपाय मानते थे। परिणामस्वरूप, बाल विवाह एक सामाजिक मानदंड बन गया। दुर्भाग्यपूर्ण वास्तविकता यह है कि लड़कियों से इस परंपरा का पालन करने की अपेक्षा की जाती थी।

बहुविवाह

पवित्र अग्नि की उपस्थिति में, पति अपनी पत्नी से यह वचन लेने के लिए बाध्य होता है कि वह अपनी भोग-विलास, आर्थिक सफलता या आध्यात्मिक ज्ञान की लालसा में उसे कभी नहीं छोड़ेगा। शिकायत यह थी कि समाज इन मानदंडों का उल्लंघन करने वाले अपराधियों को पर्याप्त कठोर दंड नहीं देता। अनेक पत्नियाँ रखना स्वीकार्य था। ऋग्वेद में कई ऋचाएँ हैं जो बहुविवाह की प्रथा का संकेत देती हैं। आर्यों का लक्ष्य बड़ी संख्या में पत्नियाँ रखना था। यह इच्छा देवताओं और राजाओं की भूमिका निभाने वाले जनजातीय नेताओं की सहायता से पूरी होती थी। दोनों अविनों की उनकी पत्नियों के गुणों के लिए कई ऋचाओं में प्रशंसा की गई है। उदाहरण के लिए, उन्होंने च्यवन को अनेक स्त्रियों का पति बनाया। इसी प्रकार, राजा असदस्य ने सुरभि को सुवस्तुरिवर के तट पर खड़े होकर पचास वर देने का प्रस्ताव दिया। राजा सुद ने वैया को अनेक वर दिए, जिन्हें दो रथों में उनके पास पहुँचाया गया। इसके बावजूद, इसमें स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है कि जब एक पुरुष की कई पत्नियाँ होती हैं तो उसे किस प्रकार की कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है।

लड़की का कर्तव्य

संहिता के अनुसार, पुत्री को पुत्रिका नाम दिया जाता है। प्राचीन काल में, किसी पुरुष द्वारा पुत्र प्राप्ति हेतु अपनी पुत्री को अपराध करने के लिए विवश करना कोई असामान्य बात नहीं थी। ऐसा कहा जाता था कि जिस भाई की कोई कुंवारी कन्या न हो, उसे अब पुत्रिक अर्थ में किसी कारण के बराबर कानूनी मान्यता प्राप्त थी, जो उस कारण के लिए सबसे विशिष्ट था। यदि उसका भाई अभी भी जीवित है, तो वह अपने पिता के अंतिम संस्कार की अध्यक्षता करता है। हालाँकि, अपने पिता की अनुपस्थिति में, वह उनके अंतिम संस्कार से संबंधित अनुष्ठान करने में सक्षम

है। इसका एकमात्र उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वह अपने पिता की संपत्ति की उत्तराधिकारी बन सके। इसका एकमात्र उद्देश्य यहाँ आवश्यक अंतिम संस्कार संस्कार करना था। वह विवाह के बाद भी इस अधिकार का प्रयोग जारी रख सकती है।

शिक्षा

महिलाओं की स्थिति सुधारने के प्रयास में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण परिवर्तन कारक के रूप में इस्तेमाल किया गया। अब शिक्षक का घर प्राथमिक शिक्षा का केंद्र बन गया है, जिसने परिवार के घर की पारंपरिक भूमिका का स्थान ले लिया है। इससे यह संकेत मिलता है कि बेटियों की तुलना में बेटों के इस लंबे और कठोर अध्ययन काल में शिक्षक के पास रहने की संभावना अधिक थी। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि प्रत्येक ब्रह्मा पुरुष तीन ऋणों के साथ पैदा होता है जिन्हें उसे जीवन भर चुकाना होता है। इस स्थिति में, वह गुरु के साथ रहकर और उनसे ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानियों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करता है। देवताओं के प्रति अपने ऋण को चुकाने के लिए उसे यज्ञ करना आवश्यक है, और पुरुषों के प्रति अपने ऋण को चुकाने के लिए उसे संतान उत्पन्न करनी होगी। दूसरी ओर, एक बेटी से जीवन भर अपने माता-पिता के साथ रहने की अपेक्षा की जाती है। यह संभव है कि उसकी शिक्षा उसके पिता से मिली हो, जो वैदिक शिक्षा के विशेषज्ञ हैं। यदि वह हैं, तो उसने भी उन्हीं से शिक्षा प्राप्त की होगी। ब्रह्मविद्या और क्रीया इस परिघटना के दो विशेष रूप से उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

विधवा

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति आम तौर पर दयनीय थी और विधवा का जीवन सामान्य महिलाओं की तुलना में और भी अधिक भयानक और भयावह था। [चेतावनी:] [चेतावनी:] [चेतावनी:] [वैदिक संस्कृति में, एक विधवा को हर समय सबसे कठोर उपचार का सामना करना पड़ता था और उसे पीड़ा, विकृति, मुंडन और वीरानी से भरा एक भयानक अस्तित्व जीने के लिए मजबूर किया जाता था। इस तथ्य के कारण कि उसका सिर मुंडवा दिया गया था, उसे किसी भी तरह की सामाजिक गतिविधि में भाग लेने की अनुमति नहीं थी, उसे अच्छे कपड़े या आभूषण पहनने की अनुमति नहीं थी और उसे सड़कों पर नंगे पैर चलने की भी अनुमति नहीं थी। परिणामस्वरूप, वह एक महिला होने के साथ आने वाली सभी भावनाओं से प्रतिबंधित थी। वैदिक समाज में, सती प्रथा आम थी।

सती

वेद, जो सभी भारतीय धर्मग्रंथों में सबसे प्राचीन और सर्वाधिक पूजनीय हैं, में "सती स्तोत्र" नामक एक अंश शामिल है जो सती प्रथा की स्पष्ट रूप से अनुमति देता है। यह अंश विधवा के वास्तविक दाह संस्कार के दौरान गाया जाता है। कथावाचक कहते हैं, "इन पत्नियों को चिता पर पहला कदम रखना चाहिए, बिना आँसू के, किसी भी बीमारी से मुक्त, और उत्तम परिधानों में।" इन पत्नियों के पति ऐसे होने चाहिए जो उनकी प्रशंसा के योग्य हों और जो अभी भी उनके साथ हों। हाल के दिनों में, आत्महत्या के समर्थकों द्वारा यह प्रदर्शित करने के कई प्रयास किए गए हैं कि यह कविता किसी भी तरह से आत्महत्या के कृत्य का समर्थन नहीं करती है।

पुनर्विवाह

संपूर्ण वैदिक काल में पुनर्विवाह वर्जित था; फिर भी, "नियोग" की अवधारणा के अनुसार, कुछ असाधारण परिस्थितियों में यह स्वीकार्य था। ऋग्वेद में एक अंश एक विलाप करती विधवा का वर्णन करता है जो अपने मृत पति के शव के पास खड़ी है। उसके पति की ननद को विश्वास है कि वह जीवित लोक में चली गई है।

निष्कर्ष

महाभारत और रामायण जैसे महाकाव्यों में वर्णित कथाएँ प्राचीन काल में स्त्रियों के जीवन को समझने का सर्वोत्तम तरीका हैं। आधुनिक समय में भी, इन महाकाव्यों में प्रस्तुत विचार विचारोत्तेजक और प्रासंगिक बने हुए हैं। हालाँकि, इतिहास के दौरान, यह सुनिश्चित करने के लिए कि समाज में सभी के साथ समान व्यवहार किया जाए और लैंगिक पूर्वाग्रह न हो, कई कानूनों में संशोधन किया गया है। इसके अलावा, आज की दुनिया में, कई राजनीतिक दल आगामी चुनावों में अधिक वोट पाने के लिए महिलाओं को राजनीतिक पदों पर नामांकित करने की संख्या बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वेदों के काल में रहने वाले लोगों की मानसिकता आज की तुलना में अधिक लैंगिक रूप से संवेदनशील, प्रगतिशील और उदार थी।

संदर्भ

1. दलोईसरमा डॉ. हरिअन्थ: स्मृतियों के युग के माध्यम से भारत, सरस्वती प्रेस, नलबाड़ी, 2013, जनवरी।
2. दत्त, एम.एन.: सोलह लघु स्मृतियाँ, खंड-I, परिमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2010.
3. अथर्ववेद, IS 5- 18
4. कन्यावरायतिसोमाऽपिसृताविदत्/ अष्टमहरन्त्यव्यविद्इन्द्रायसुनावैतवासक्रायसुनावैत्वा// (आर.वी., 8/91/1)
5. प्राचीन भारत में शिक्षा, अध्याय 9
6. स्मृतियों के युगों से भारत, पृष्ठ 103
7. वही, पृष्ठ 114
8. ऋग्वेद, 10/27/12
9. स्मृतियों के युगों से भारत, पृष्ठ 103
10. सोलह लघु स्मृतियाँ, खंड-I, पृ.
11. सोलह लघु स्मृतियाँ, खंड- ii, पृ.